B.M.A. College Baheri Darbhanga (LNMU)
B.A. (Hons) Part-II Paper-I Economics

1
1.04.2020

अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओं में पूँजी का आवंटन, Dr. S.K. Singh
Deptt. of Economics

Allocation of Capital :- पूँजी के आवंटन की समस्या का सम्बन्ध पूँजी-संग्रह के प्रकार और किस्म उन विभिन्न क्षेत्रों से है जिनमें विनियोग किया जाता है और उन कसौटियों के निर्धारण से है जिनका प्रयोग पूँजी-आवंटन में किया जाता है।

पूँजी के आवंटन (Allocation of Capital) पर अल्पविकसित देशों के विशेष सदनों का प्रभाव पड़ेगा। चूँकि अल्पविकसित देशों में श्रम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है परन्तु पूँजी न्यून मात्रा में इसलिए इन देशों में पूँजी बचाव के उपायों अथवा श्रम-प्रयोग के उपायों का अधिक इस्तेमाल होना चाहिए। जहाँ कहीं भी उत्पादन के विभिन्न ढंगों से चुनाव की समस्या उत्पन्न होती है कृषि में चाहे अधिक पूँजी भी लगायी जाए उत्पादन का ढंग श्रम-प्रधान (Labour intensive) ही रहेगा। कृषि के यंत्रीकरण (Mechanisation) में पूँजी विनियोग करने की अपेक्षा यदि इसका प्रयोग अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में किया जाए तो यह अपेक्षाकृत अधिक उत्पादक होगा।

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में विनियोग अधिकतर छोटे उद्यमों में किया जाता है इसका कुछ हद तक तो यह कारण है, कि पूँजी की मात्रा न्यून है और कुछ हद तक यह कि इनमें कम जोखिम सहन करना पड़ता है लघु स्तर के उद्यमों के पक्ष में अन्य लाभ ये है कि इनके द्वारा उत्पादन के श्रेष्ठतर उपायों का अधिक प्रसार हो सकता है इसी उत्पादक तकनीकों में बहुत से व्यक्ति भाग ले सकते हैं, और प्रबन्ध प्रशिक्षण (Management training) के लिए अधिक अवसर उपलब्ध हो सकते है परन्तु छोटे पैमाने की इकाइयों के लाभों की प्रायः सीमाएं भी होती है। इसके अतिरिक्त अल्पविकसित देशों के लिए यह अनिवार्य है कि कुछ क्षेत्रों में वे कुछ प्रकार के विनियोग पर ध्यान केन्द्रित करें और अन्य क्षेत्रों में नयी उत्पादक तकनीकों को अपनाने कि छूट दें।

सम्पत्ति का प्रकार
Kinds of Wealth

प्रत्येक प्रकार कि सम्पत्ति की अपनी अलग विशेषता होती हैं जिसका उल्लेख किया जाए तो वह विभिन्न प्रकार का प्रतिफल देनेवाली होती है।
जिनका वर्णन निम्न प्रकार है।

(1) मुद्रा (Money) मुद्रा में करेंसी, माँग खाते और समय खाते शामिल हैं जिनमें जमाओं पर ब्याज प्राप्त होता है। यह धारक को सुविधा, सुरक्षा आदि के रूप में वास्तविक प्रतिफल देती है।

(2) बांड (Bonds) बांडों को भुगतानों की समय धारा के दावों के रूप में परिभाषित किया गया है, जो मुद्रा रूप इकाइयों में स्थिर है।

(3) मानव पूँजी (Human capital) मानव पूँजी मानवों की उत्पादकीय क्षमता है।

(4) भौतिक वस्तुएँ (Physical Goods) वे उपभोक्ता और उत्पादक टिकाऊ वस्तुओं की मात्र सूचियां हैं।

(5) इक्विटी (Equity) इक्विटी को भुगतानों की समय धारक के दावों के रूप में परिभाषित किया गया है, जो वास्तविक इकाईयों में मापा है।

इस प्रकार सम्पत्ति की प्रत्येक किस्म की अपनी अद्वितीय विशेषता है। उक्त पाँच प्रकार की सम्पत्ति से प्रत्याशित आय प्रवाहों का वर्तमान बट्टागत मूल्य सम्पत्ति का चालू मूल्य बनता है, जिसे निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है,

$$W = Y/r$$

यह समीकरण दर्शाता है, कि सम्पत्ति पूँजीकृत आय है। इस प्रकार आय के अलावा मुद्रा की सेवाओं से सम्बंध उपयोगिता को प्रभावित कर सकते हैं जो वास्तविक ब्याज को निर्धारित करते हैं ब्याज के अतिरिक्त सम्पत्ति धारकों की कमियों और अधिमान भी होते हैं। एक अन्य चर अंतिम सम्पत्ति धारकों द्वारा वर्तमान पूँजी वस्तुओं में व्यापार है। ये चार सम्पत्तियों के अन्य प्रकारों के साथ मुद्रा के माँग फलन को भी निर्धारित करता है।

रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया
(RESERVE BANK OF INDIA)

Dr. S.K. Singh
Deptt of Economics

केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता (Need of a Central Bank) मुद्रा एवं बैंकिंग व्यवस्था में स्थायित्व लाने के उद्देश्य से भारत में केन्द्रीय बैंक (Central Bank) की आवश्यकता का अनुभव लोगों को बहुत पहले से ही हो रहा था किन्तु 1935 ई० के पूर्व तक देश में इस प्रकार की किसी संस्था की स्थापना नहीं की जा सकी थी। 1913 ई० में चेम्बरलेन आयोग (Chamberlain Commission) के सदस्यों के रूप में लार्ड केन्स (Keynes) ने भारतीय केन्द्रीय बैंक के विधान का एक खाका तैयार किया था। किन्तु इसी बीच 1914 ई० में प्रथम विश्व-युद्ध छिड़ जाने के कारण केन्स के प्रस्ताव के सम्बंध में कोई विचार नहीं किया जा सका। 1920 में ब्रूसेल्स की अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ परिषद (International Economics Conference) ने स्वर्ण-मान की पुनर्स्थापना के लिए इस आशय का एक प्रस्ताव स्वीकार किया था कि जिस देश में केन्द्रीय बैंक नहीं है वहाँ इसकी स्थापना शीघ्र ही की जानी चाहिए। वास्तव में स्वर्णमान की सफलता के लिए केन्द्रीय बैंक की स्थापना अनिवार्य थी। अतः इस कमी को दूर करने के लिए 1920 ई० में भारत सरकार ने तीनों प्रेसीडेंसी बैंक को मिलाकर एक इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की, किन्तु इम्पीरियल बैंक प्रधानतया एक व्यावसायिक बैंक था जिसे केन्द्रीय बैंक के कुछ ही कार्य एवं अधिकार दिये गये थे। अतएव यह केन्द्रीय बैंक के कार्यों को पूरा नहीं कर सका। 1926 में हिल्टन यंग आयोग (Hilton Young Commission) ने मौद्रिक एवं साख-व्यवस्था के समुचित संचालन एवं नियंत्रण के लिए एक स्वतंत्र केन्द्रीय बैंक की स्थापना का सुझाव दिया था जिसकी प्रमुख विशेषताएँ रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की योजना में सम्मिलित की गयी। केन्द्रीय बैंकिंग जाँच समिति ने भी 1930 में भारत में एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना का सुझाव दिया था। इन सब सिफारिशों एवं सुझावों के साथ ही देश की बढ़ती हुई राष्ट्रीय चेतना ने भी रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना में तात्कालिक सहयोग प्रदान किया।

Dr S.K. Singh
Deptt of Economics

अंतर्राष्ट्रीय तरलता का महत्व

(Importance of the International liquidity)

आधुनिक विश्व में सभी देशों में अपरिवर्तनीय पत्र मुद्रा के प्रचलन के कारण अंतर्राष्ट्रीय लेन देन का कार्य एक समस्या बन गया है। यदि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धी भुगतान सुविधापूर्वक नहीं हो तो विदेशी व्यापार में बाधा उत्पन्न होती है तथा इससे विदेशी व्यापार की मात्रा में कमी आती है। इसके विपरीत पर्याप्त मात्रा में अन्तर्राष्ट्रीय तरलता की उपलब्धि से विदेशी व्यापार में निरन्तर वृद्धि होती रहेगी। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के समय विश्व के कुल औपचारिक स्वर्ण-कोषों का प्रायः 70 प्रतिशत भाग केवल संयुक्त राज्य अमेरिका के पास जमा हो गया था, अतः अन्य देशों के समक्ष निर्यात के भुगतान के रूप में विदेशी भुगतान की जटिल समस्या उत्पन्न हो गयी थी। अमेरिकी स्वर्ण का अधिक न्यायपूर्ण वितरण करने की एकमात्र रीति यह थी कि अमेरिका का व्यापार संतुलन (Balance of Trade) इसके प्रतिकूल हो जिसे स्वर्ण के निर्यात द्वारा पूरा किया जा सके। किन्तु स्थिति इसके ठीक विपरीत थी तथा अमेरिकी व्यापार संतुलन निरंतर इसके अनुकूल ही रहा और डॉलर की मांग उसकी पूर्ति से अधिक थी। इसी कारण डॉलर के अभाव की स्थिति बनी रही और प्रायः 1957 तक विश्व में डालर की दुर्लभता का निरंतर अनुभव किया जाता रहा। किन्तु 1958 से अमरीकी चालू खाता में भुगतान संतुलन विशेष रूप से प्रतिकूल रहने लगा जिसके फलस्वरूप अमेरिका से स्वर्ण का निर्यात होने लगा। परिणामस्वरूप अमेरिका का स्वर्ण कोष जो 1949 में 24.3 अरब डॉलर मूल्य का था 1958 ई० में घटकर 20.28 अरब डॉलर तथा जुलाई, 1969 में 17.37 अरब डॉलर हो गया। अमेरिका के स्वर्ण कोष में इस प्रकार की जो कमी हुई उसका अधिकांश भाग यूरोपीय देशों को प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त मुद्रा-कोष तथा विश्व बैंक जैसी संस्थाओं के प्रयत्नों के परिणामस्वरूप भी अंतर्राष्ट्रीय तरलता की वृद्धि में पर्याप्त सहायता मिली।